अध्याय 2

अभिनिष्क्रमण

0822CH02

गृह-त्याग

शाक्त पुत्र सिद्धार्थ को विविध प्रकार के आमोद-प्रमोद तथा भोग-विलासों द्वारा लुभाने का प्रयत्न किया गया था, परंतु उसे उनमें न शांति मिली न सुख। जैसे कोई सिंह विषाक्त बाण के लग जाने पर बहुत बेचैन हो जाता है वैसे ही राजकुमार बेचैन हो गया था, इसलिए उसके मन में शांति प्राप्ति के लिए, वन की ओर जाने की इच्छा हुई। उसने अपने कुछ घनिष्ठ मित्रों को साथ लिया और वन जाने के लिए महाराज से आज्ञा माँगी।

आज्ञा प्राप्त कर राजकुमार सिद्धार्थ अपने मित्रों के साथ राजभवन से निकला। सुंदर घोड़ों पर सवार होकर वह सुदूर वन-प्रांतर की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसने जुते हुए खेतों को देखा, खेतों में हल से उखड़ी हुई घास तथा अन्य खरपतवार देखे। हल की जुताई से मरे हुए कीड़े-मकोड़ों को देखकर राजकुमार का हृदय द्रवित हो गया। उसका मन शोक से भर गया। वह विह्वल होकर घोड़े की पीठ से उतर गया और धरती पर इधर-उधर घूमने लगा। राजकुमार का मन जन्म और मृत्यु के विषय में सोचते-सोचते बहुत ही व्याकुल हो गया।

मन को एकाग्र करने की इच्छा से राजकुमार ने अपने मित्रों को वहीं रोक दिया और स्वयं सामने जामुन के पेड़ के नीचे बैठकर ध्यान करने लगा। थोड़ी देर ध्यान करने से वह कुछ स्थिर हुआ। वह राग-द्वेष से मुक्त होकर तर्कसंगत विचारों में डूब गया। धीरे-धीरे उसने मानसिक समाधि प्राप्त की और उसे शांति और सुख का अनुभव हुआ।

धीरे-धीरे सिद्धार्थ के मन में सांसारिक जीवन की गति स्पष्ट होने लगी। उसे लगा, लोग अज्ञानवश ही जरा, व्याधि और मृत्यु की उपेक्षा कर रहे हैं। वह सोचने लगा, क्या मैं इन्हीं की तरह इनकी उपेक्षा करूँ? नहीं, मेरे लिए यह उचित नहीं होगा। इस प्रकार के विचारों से उसका अहंकार समाप्त हो गया। अब वह हर्ष, संताप और संदेह से मुक्त था। इस समय वह न निद्रा में था, न तंद्रा में, अब उसके मन में किसी के लिए न राग था और ना द्वेष।

© NCERT not to be republished

इस मानसिक समाधि से सिद्धार्थ की बुद्धि जब निर्मल हो गई तो उसे भिक्षु वेश में एक पुरुष दिखाई दिया। वह और किसी को नहीं दिखाई पड़ रहा था। सिद्धार्थ ने उस पुरुष से पूछा कि आप कौन हैं? तो उसने बताया— "मैं जन्म-मृत्यु से डरा हुआ एक संन्यासी हूँ; मैं मोक्ष की खोज मे हूँ; अपने-पराए के प्रति समान भाव रखते हुए, अब मैं राग-द्वेष से मुक्त हो गया हूँ; अत: अब विचरण ही करता रहता हूँ; कभी किसी वन-प्रांतर में रहता हूँ; सभी आशाओं से मुक्त; संग्रहशीलता से मुक्त; अनायास जो कुछ मिल जाए उसे ही खाकर मैं मोक्ष की खोज में घूमता रहता हूँ।" कभी किसी पेड़ के नीचे; कभी किसी निर्जन देवालय में; कभी किसी पर्वत पर यह कहकर वह संयासी राजकुमार के देखते-देखते अंतर्धान हो गया।

उस संन्यासी के अदृश्य हो जाने के बाद राजकुमार सिद्धार्थ को बहुत ही प्रसन्नता हुई। उसे विस्मय भी हुआ, उसे धर्म का ज्ञान प्राप्त हो गया था, इसलिए उसने अब अपने मन में घर त्यागने का संकल्प कर लिया। जितेंद्रिय राजकुमार ने वहीं से वन जाने का प्रयत्न नहीं किया, वरन वह प्रसन्नतापूर्वक अपने मित्रों को साथ लेकर नगर की ओर चल पड़ा।

राजकुमार जब अपने राजभवन की ओर जा रहा था तो राजमार्ग में किसी राजकन्या ने उसे देखा और हाथ जोड़कर कहा— "हे विशाल-नयन! आप जिस स्त्री के पति हैं, वह निश्चित ही निवृत्त है, सुखी है।" राजकुमार को इस 'निवृत्त' शब्द के श्रवण मात्र से परम शांति का अनुभव हुआ और वह निर्वाण के विषय में सोचने लगा।

राजकुमार इसी भाव के साथ सीधा राजसभा में पहुँचा, जहाँ मंत्रियों के बीच राजा वैसे ही सुशोभित हो रहे थे, जैसे देवताओं की सभा में इंद्र।

राजकुमार ने हाथ जोड़कर पहले राजा को प्रणाम किया और फिर सविनय निवेदन किया— "हे नरदेव, मैं अब मोक्ष-प्राप्ति के लिए संन्यास लेना चाहता हूँ, आप कृपाकर मुझे आज्ञा प्रदान करें, क्योंकि यह निश्चित है कि एक न एक दिन मेरा और आपका वियोग होगा, अत: अभी जाने की आज्ञा प्रदान कर मुझे उपकृत करें।"

राजकुमार के वचनों को सुनकर राजा उसी तरह काँप गए, जिस तरह कोई वृक्ष हाथी की रगड़ से काँप जाता है। उनका गला भर आया, उन्होंने कुमार का हाथ पकड़ कर कहा— "हे तात! इस तरह के विचारों को तुम त्याग दो; अभी संन्यास लेने का समय तो मेरा है; तुम तो पुरुषार्थ करो; राजलक्ष्मी का भोग करो; गृहस्थ धर्म

© NCERT not to be republished

का पालन करो और युवावस्था में सुख भोगने के बाद तुम तपोवन में प्रवेश करना। यह तुम्हारे संन्यास ग्रहण करने का समय नहीं है।"

राजा ने तरह-तरह के तर्क देकर राजकुमार को समझाया, परंतु राजकुमार ने उनके सभी तर्कों को निरस्त कर दिया। अंत में कहा— "यदि आप मेरी चार बातों को पूरा कर दें तो मैं आपको वचन देता हूँ कि मैं तपोवन नहीं जाऊँगा। वे चार बातें हैं—

मेरी मृत्यु न हो।
मैं सदा रोगमुक्त रहूँ।
मुझे कभी बुढ़ापा न आए और
मेरी संपत्ति सदा बनी रहे।"

राजकुमार सिद्धार्थ की इन असंभव बातों को सुनकर महाराज शुद्धोदन चकित हो गए, उन्होंने उसे बहुत समझाया और कहा— "हे पुत्र! ऐसी ऊटपटांग बातें मत करो। मेरा हृदय फटा जा रहा है। देखो, तर्कहीन बातें करने वाला व्यक्ति सदा उपहास का पात्र होता है, अत: तुम इस विचार को छोड़ दो।"

परंतु राजकुमार ने उनकी एक भी बात न मानी और अंत में कहा— "न सही मेरी बातों में कोई तर्क, किंतु मुझे लगता है, जिस घर में आग लग गई हो, उससे

निकल जाना ही श्रेयस्कर है। जब मेरा आपका वियोग निश्चित है, तो धर्म पालन के लिए उस वियोग को मैं अभी क्यों न चुन लूँ, नहीं तो मृत्यु तो अलग करेगी ही।"

राजकुमार की इस प्रकार की निश्चय भरी बातें सुनकर मंत्रियों ने भी उसे बहुत समझाया। राजा ने आँखों में आँसू भरकर उसे रोकना चाहा, परंतु उसने किसी की एक भी बात न मानी और अपना निर्णय सुनाकर अपने महल की ओर चल दिया।

जैसे ही राजकुमार अपने महल में पहुँचा, उसे सुंदर स्त्रियों ने घेर लिया। उस तेजस्वी राजकुमार को देखकर वे मोहित हो गईं। पर राजकुमार पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह अपने कक्ष में गया और सोने के आसन पर बैठ गया। अब भी वह परमार्थ सुख की प्राप्ति के लिए घर से निकल जाने के विचारों में डूबा हुआ था। विचार करते-करते राजकुमार का मन सब कुछ छोड़कर चलने के लिए उतावला हो गया। वह नि:शंक भाव से उठा और झट से अपने कक्ष से बाहर आ गया।

वहाँ राजकुमार ने सोते हुए अश्व-रक्षक छंदक को जगाया और कहा— "हे छंदक! तुम शीघ्र कंथक (घोड़े) को ले आओ। मैं अभी अमृत-प्राप्ति के लिए जाना चाहता हूँ। आज मेरे हृदय में संतोष है, बुद्धि में दृढ़ निश्चय है और मेरा लक्ष्य मेरे सामने है। लगता है, मेरे जाने का समय आ गया है।"

अश्व-रक्षक छंदक राजा की इच्छा तो जानता था, लेकिन उसने चुपचाप राजकुमार की आज्ञा का पालन किया। वह शीघ्र ही अश्वशाला में गया और वहाँ से वेगवान अश्व कंथक को ले आया।

राजकुमार ने घोड़े के शरीर पर हाथ फेरा और कहा— "हे तुरंग श्रेष्ठ! तुम पर सवार होकर हमारे राजा ने अनेक शत्रुओं को जीता है। अब तुम ऐसा करो जिससे मुझे अमृत पद की प्राप्ति हो। इसका लाभ तुम्हें भी होगा, तुम्हें पुण्य मिलेगा। इसलिए तुम मेरे हित के लिए और जगत के कल्याण के लिए मुझे शीघ्र ही यहाँ से निकाल ले चलो।"

इस प्रकार उस श्वेत अश्व हो समझा कर राजकुमार उस पर सवार हो गया। ऐसा लगता था जैसे कि शरदकालीन मेघ पर सूर्य सवार हो गया हो। वह घोड़ा इस तरह चलने लगा, जिससे किसी प्रकार की आवाज़ न हो, कोई परिजन जागे नहीं। बिना हिनहिनाए वह शीघ्र राजभवन के द्वार पर आ गया। राजमहल के द्वार अपने आप खुल गए। सभी प्रहरी सो गए और राजकुमार अपने दृढ़ संकल्प के साथ,

© NCERT not to be republished

अपने हितैषी पिता, प्रिय, पुत्र अनुरक्त गृहलक्ष्मी और अन्य प्रियजनों को त्याग कर नगर से बाहर निकल गया।

राजकुमार सिद्धार्थ ने एक बार नगर की ओर मुड़कर देखा और घोषणा की— "जन्म और मृत्यु के पार देखे बिना मैं अब इस कपिलवस्तु नगर में प्रवेश नहीं करूँगा।"

सूर्य के घोड़ों के समान यह घोड़ा भी किसी दैवी प्रेरणा से द्रुत गति से चला जा रहा था। उदीयमान सूर्य की किरणों से जब तारे मलिन होने लगे, तब तक वह राजकुमार को लेकर नगर से कई योजन दूर निकल आया था।

छंदक की वापसी

थोड़े समय बाद सामने भार्गव ऋषि का आश्रम दिखाई दिया। आश्रम के पास निश्चिंत भाव से अभी अनेक हिरण सोए हुए थे। वृक्षों पर पक्षी शांत बैठे थे। आश्रम की यह शोभा देखकर राजकुमार प्रसन्न हुआ और उसे लगा कि वह कृतार्थ हो गया। उसकी सारी थकान जाती रही। आश्रम के द्वार पर पहुँचकर तपस्या को सम्मान देने के लिए वह विनम्रभाव से घोड़े की पीठ से उतर गया।

घोड़े से उतरकर राजकुमार ने पहले अपने घोड़े को सहलाया, उसे पुचकारा और कहा— "हे वत्स, तुमने मुझे पार उतार दिया है।" फिर स्निग्ध दृष्टि से छंदक को निहारते हुए कहा— "हे सौम्य, गरुड़ के समान द्रुतगति से चलने वाले इस घोड़े के साथ-साथ दौड़कर तुमने जो मुझमें भक्ति दिखाई है, उसने मेरा मन जीत लिया है।

मैं तुमसे पूरी तरह संतुष्ट हूँ, क्योंकि तुम्हारे मन में इसके लिए किसी फल की कामना नहीं है। मैं और क्या कहूँ! तुमने मेरा प्रिय कार्य किया है। अब तुम घोड़े को लेकर लौट जाओ। मुझे मेरा गंतव्य मिल गया है।

इतना कहकर राजकुमार ने प्रत्युपकार के रूप में अपने सारे आभूषण उतारकर छंदक को दे दिए, उन्होंने दीपक के समान चमकने वाली एक मणि अपने मुकुट से निकाल कर उसे दी और कहा— "हे छंदक, राजा को यह मणि देकर मेरी ओर से बारंबार नमस्कार करना और उनके शोक-निवारण के लिए मेरा यह संदेश कहना— हे तात! मैं स्वर्ग की तृष्णा से या वैराग्य भाव से या क्रोध से तपोवन नहीं आया हूँ। मैं जरा और मरण के नाश का मार्ग खोजने के लिए यहाँ आया हूँ। शोक-त्याग के लिए निकलने वाले व्यक्ति के लिए किसी को शोक नहीं करना चाहिए। मैं अपने पूर्वजों की परंपरा का ही अनुसरण कर रहा हूँ, अत: आप मेरे लिए शोक न करें। मृत्यु रूपी शत्रु के रहते हुए जीवन का क्या भरोसा! इसीलिए युवावस्था में ही मैंने कल्याण का मार्ग चुन लिया है।"

राजकुमार ने फिर छंदक से कहा— "हे सौम्य, इसी तरह की और भी बातें करके तुम राजा को समझाना। तुम मेरी बुराई भी करना, क्योंकि दोष-दर्शन के कारण स्नेह छूट जाता है और स्नेह समाप्त होने से शोक समाप्त हो जाता है।"

राजकुमार की ये बातें सुनकर छंदक बहुत व्याकुल हो गया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। उसने हाथ जोड़कर भरे गले से कहा— "हे स्वामी, स्वजनों को दुख देने वाले आपके इन विचारों से मेरा मन दलदल में फँसे हाथी के समान व्यथित हो रहा है। आपके इस निर्णय से किसे कष्ट नहीं होगा? कहाँ कोमल शय्या पर सोने योग्य यह शरीर और कहाँ यह कंटकाकीर्ण कठोर तपोभूमि! न जाने मैं आपको यहाँ तक कैसे ले आया? यदि मैं अपने अधीन होता तो आपके निश्चय को जानकर मैं इस अश्व को कभी न लाता। आप अपने वृद्ध पिता को इस प्रकार मत छोड़िए। आप अपनी दूसरी माता (मौसी) को भी मत छोड़िए। देवी यशोधरा का त्याग मत कीजिए। अपने अबोध पुत्र को मत त्यागिए। यदि आपने अपने स्वजनों और राज्य को त्यागने का दृढ़ निश्चय कर ही लिया है, तो भी आप मुझे न त्यागिए। आपके चरणों में ही मेरी गति है, जैसे सुमंत राम को वन में छोड़ गए थे, वैसे ही मैं आपको वन में छोड़कर नगर नहीं लौट सकता।"

उसने आगे कहा— "हे तात, आपके बिना यदि मैं नगर लौट जाऊँगा तो महाराज मुझसे क्या कहेंगे? अंत:पुर की रानियाँ क्या कहेंगी? मैं यदि झूठ-मूठ ही

© NCERT not to be republished

आपकी बुराई करूँगा, तो भी उस पर कौन विश्वास करेगा? इसलिए हे दयालु! आप करुणाकर मुझ पर प्रसन्न हों और घर लौट चलें।"

छंदक की इन बातों को सुनकर कुमार ने बड़े धैर्य और शांति के साथ उसे पुन: समझाया और कहा— "छंदक, स्नेह के कारण चाहे हम स्वयं स्वजनों को न छोड़ें, फिर भी वे एक न एक दिन मृत्यु के कारण छूट ही जाते हैं। जिस माँ ने मुझे कष्टपूर्वक गर्भ मे धारण किया, वह माँ अब कहाँ है और मैं कहाँ हूँ? जैसे रात को पक्षी एक वृक्ष पर एकत्र होते हैं और प्रात:काल फिर अलग हो जाते हैं। उसी तरह सब लोग मिलते हैं और फिर विलग हो जाते हैं, इसलिए तुम संताप छोड़ो और नगर लौट जाओ, यदि तुम्हारा मन न माने तो फिर तुम मेरे पास चले आना, अभी तो तुम कपिलवस्तु लौट जाओ और मेरी प्रतीक्षा कर रहे लोगों को समझाओ। तुम उनसे कहना कि मेरे प्रति मोह को त्योग दें। मैं जन्म-मृत्यु का रहस्य जानकर अवश्य ही कपिलवस्तु लौटूँगा और यदि मुझे लक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ तो मैं जीवित नहीं रहूँगा।"

राजकुमार सिद्धार्थ के वचनों को सुनकर कंथक अश्व की आँखों से भी आँसू बहने लगे और वह जीभ से अपने स्वामी के चरणों को चाटने लगा। राजकुमार ने भी उसे सहलाते हुए कहा है— "हे कंथक! रोओ मत! तुमने आज अच्छा कार्य किया है, उसका सुफल तुम्हें अवश्य मिलेगा।" ऐसा कहकर राजकुमार ने छंदक के हाथ से स्वर्ण जड़ित कृपाल ले ली, उससे अपने केश काटे और मुकुट फेंक दिया।

राजकुमार ने अपने सारे अलंकारों का त्याग किया और स्वर्णिम वस्त्रों को त्यागकर वन-वस्त्र धारण करने की इच्छा की। तभी एक शिकारी प्रकट हो गया जो काषाय वस्त्र धारण किए हुए था। सिद्धार्थ ने उस शिकारी से कहा— "हे सौम्य! इस हिंसक धनुष के साथ ऋषियों के काषाय वस्त्र आपको शोभा नहीं देते, यदि आपको इन वस्त्रों से मोह न हो तो आप मेरे शुभ वस्त्रों को ले लें और अपने ये काषाय वस्त्र मुझे दे दें।"

सिद्धार्थ की बातें सुनकर शिकारी ने कहा— "यदि आपको मेरे काषाय वस्त्र अच्छे लगते हैं, तो ले लीजिए और मुझे अपने वस्त्र दे दीजिए।" दोनों ने परस्पर वस्त्र बदले। इसके बाद शिकारी चला गया। यह सब देखकर छंदक आश्चर्यचकित रह गया। छंदक ने काषाय वस्त्रधारी राजकुमार को विधिवत प्रणाम किया। काषायधारी सिद्धार्थ ने उसे प्रेमपूर्वक विदा किया और स्वयं अकेला आश्रम की ओर चल पड़ा।

राज्य से विरक्त अपने स्वामी को इस प्रकार जाते देखकर छंदक फूट-फूट कर रोने लगा और भूमि पर गिर पड़ा। थोड़ी देर बाद होश आने पर वह फिर उठा और

कंथक से लिपट कर रोने लगा। धीरे-धीरे साहस बटोरकर वह कपिलवस्तु की ओर चलने लगा। कभी रोता, कभी बिलखता, कभी गिरता और कभी उठता, वह धीरे-धीरे कपिलवस्तु की ओर चलता गया।

तपोवन प्रवेश

जाते हुए छंदक को विदाकर जब सिद्धार्थ ने किसी सिद्धयोगी की तरह आश्रम में प्रवेश किया तो उनके स्वरूप से सारा आश्रम अभिभूत हो गया। उनके शरीर पर कोई राजचिह्न नहीं था, फिर भी सभी आश्रमवासियों की दृष्टि उनकी ओर अनायास ही आकृष्ट हो गई। जो किसान अपनी स्त्रियों के साथ खेत की ओर जा रहे थे, वे सिद्धार्थ की ओर देखते रह गए। जो ब्राह्मण-कुमार हाथों में समिधा और फूल लिए हुए लौट रहे थे एकटक कुमार की ओर देखते रह गए और अपने मठ की ओर जाना भूल गए। काषाय वेशधारी सिद्धार्थ को देखकर आश्रम के मोर प्रसन्न होकर बोलने लगे। चंचल नेत्र वाले मृग चरना भूलकर उनके सामने आकर खड़े हो गए और गायों के थनों से स्वत: दूध चूने लगा।

आश्रम के ऋषि-मुनियों ने जब दूर से ही सिद्धार्थ को देखा तो चकित हो गए और कहने लगे— "क्या यह आठवाँ वसु है? या अश्विनी-कुमारो में से ही कोई एक है, जो स्वर्ग से पृथ्वी पर आ गया है।" इस तरह इंद्र के समान शरीर वाले इस कुमार ने सहसा सूर्य के समान अपने प्रकाश से सभी के मन को प्रकाशित कर दिया।

आश्रम में प्रवेश करने के बाद आश्रमवासियों ने सिद्धार्थ का स्वागत किया, उनका अभिनंदन किया और कुशल समाचार पूछे। सिद्धार्थ ने भी सभी आश्रमवासियों का अभिनंदन किया। मोक्ष चाहने वाले कुमार ने स्वर्ग चाहने वाले आश्रमवासियों के साथ बातचीत की और तपोवन का निरीक्षण किया। उन्होंने आश्रम की सारी गतिविधियों की जानकारी प्राप्त की और तपस्या के विविध रूपों के विषय में चर्चा की। प्रारंभिक परिचय के बाद उन्होंने आश्रम के तपस्वी साधकों से कहा— "आज मैं पहली बार आश्रम देख रहा हूँ। मैं यहाँ के नियमों से नितांत अपरिचित हूँ। कृपया आप बताइए कि आपका लक्ष्य क्या है? आप क्या कर रहे हैं?" तब एक तपस्वी ने उन्हें विभिन्न प्रकार की साधनाओं के विषय में बताया और उनके फलों की जानकारी भी दी। उन्होंने बताया कि कुछ तपस्वी पक्षियों की तरह बीन-बीन कर अन्न चुगते हैं; कुछ मृगों की तरह तृण चरते हैं; कुछ बाँबियों में साँपों के साथ रहकर वायु पर ही जीवित रहते हैं; कुछ जटाधारी साधु मंत्रों से अग्नि में

© NCERT not to be republished

आहुति देते हैं; कुछ जल में प्रवेश कर मछलियों के साथ रहते हैं, इस तरह विविध प्रकार के कठोर तप बहुत समय तक करने के बाद श्रेष्ठ साधक स्वर्ग प्राप्त करते हैं तथा निकृष्ट साधक पुन: धरती पर जन्म लेते हैं। अंत में तपस्वी ने कहा— "दुख के मार्ग पर चलने से ही सुख मिल सकता है और सुख ही धर्म का मूल है।"

राजकुमार सिद्धार्थ ने तपस्वियों की सारी बातें ध्यान से सुनीं। परंतु उन्हें इनकी बातों से संतोष नहीं हुआ। उन्होंने मन-ही-मन कहा— "विविध प्रकार की ये तपस्याएँ दुख रूप ही हैं और इन तपस्याओं का फल स्वर्ग है, किंतु जब सब कुछ परिवर्तनशील है, तब इन आश्रमवासियों का परिश्रम भी स्थायी फल देने वाला नहीं हो सकता। उन्हें लगा कि जैसे कुछ लोग इस लोक में सुख पाने के लिए कष्ट भोगते हैं, वैसे ही ये लोग स्वर्ग में सुख भोगने के लिए कष्ट भोग रहे हैं। यह निंदनीय तो नहीं है, परंतु बुद्धिमानों को कुछ ऐसा करना चाहिए कि फिर करने के लिए कुछ न बचे।

राजकुमार ने आगे सोचा, यदि इस लोक में शरीर-पीड़ा सहना धर्म है, तो निश्चित ही शरीर के सुख को अधर्म कहना चाहिए। उन्हें लगा यह शरीर तो मन के अधीन है। मन के अनुसार ही यह कर्मों में प्रवृत्त है और उनसे निवृत्त होता है, अत: मन का दमन करना ही उचित होगा।

इस तरह विचार करते-करते शाम हो गई। फिर धीरे-धीरे उन्होंने उस वन में प्रवेश किया जहाँ यज्ञ का धुआँ फैला हुआ था। अग्निहोत्र की पूर्णाहुति दी जा रही थी। ऋषिगण एकत्रित थे, उनके मंत्रों के स्वरों से देव मंदिर गूँज रहा था और सारा वातावरण हवन की सुगंध से परिपूर्ण था।

राजकुमार सिद्धार्थ ने इस आश्रम में कई दिन बिताए। उन्होंने यहाँ पर चल रही सारी तप-विधियों का गहन अध्ययन और परीक्षण किया, किंतु उन्हें इन तप-विधियों से संतोष नहीं मिला, अत: एक दिन उन्होंने इस तपोवन को छोड़ देने का निश्चय किया।

कुछ ही दिनों में राजकुमार सिद्धार्थ के रूप, व्यवहार और विचारों से उस तपोभूमि के सभी निवासी ऐसे प्रभावित हो गए थे कि जब वे आश्रम से जाने लगे तो सभी उनके पीछे-पीछे चलने लगे। जब सिद्धार्थ ने देखा कि सभी आश्रमवासी उनके पीछे-पीछे चले आ रहे हैं तो वे रुके और एक सुंदर वृक्ष के नीचे बैठ गए। सारे आश्रमवासी उन्हें घेरकर खड़े हो गए। उनमें से एक वृद्ध साधु ने बड़े आदर के साथ उनसे कहा— "हे तात! आपके आने से यह आश्रम भरा-भरा-सा लगने लगा

था और अब आपके जाने से यह सूना-सूना सा होता जा रहा है। इसलिए आप इसे न छोड़ें। यहाँ निकट ही ब्रह्मर्षियों, राजर्षियों और देवर्षियों द्वारा सेवित हिमालय है। चारों ओर पवित्र तीर्थस्थान हैं। क्या आपने इस आश्रम में किसी को नकारा या संकुचित विचार वाला देखा है? किसी को अपवित्र देखा है? जिसके कारण आप यहाँ रहना नहीं चाहते। आपको जब तक अच्छा लगे तब तक आप यहीं रहें। ये तपस्वी अपनी तपस्या में आपको सहायक बनाना चाहते हैं। आपके यहाँ रहने से इन सबका अभ्युदय होगा।"

उस वृद्ध तपस्वी के विनय-वचनों को सुनकर राजकुमार ने कहा— "हे तपोधन! आप सबने मेरे प्रति ऐसे भाव व्यक्त करके मुझे जो स्नेह और आदर दिया है, उससे मैं अभिभूत-अभिभूसा हो गया हूँ। आप लोगों को छोड़ने में मुझे भी वैसा ही दुख हो रहा है, जैसे अपने बंधुओं को छोड़ने पर होता है, किंतु आप सबका धर्म स्वर्ग के लिए है और मेरी अभिलाषा मोक्ष की है। इसीलिए मैं इस तपोवन को छोड़ना चाहता हूँ। यहाँ के प्रति मेरे मन में न अरुचि है और न ही मैंने यहाँ कोई अपकार-दुराचार देखा है। आप महर्षि सदृश है। पूर्व युग के अनुरूप धर्म में प्रतिष्ठित हैं, परंतु इसमें मेरी कोई रुचि नहीं है। इसीलिए मैं यहाँ से जा हूँ।"

इस तरह तपस्वी कुमार के मनोहर, अर्थयुक्त और स्निग्ध वचन सुनकर सभी अत्यंत संतुष्ट हुए। तभी उनके बीच से एक भस्म लगाए तपस्वी बोला— "हे प्राज्ञ, आपका निश्चय सचमुच ही प्रशंसनीय है। आप ने युवावस्था में ही जन्मगत दोषों को देख लिया है, इसीलिए आपने स्वर्ग का नहीं, अपितु अपवर्ग (मोक्ष) का मार्ग चुना है। आप निश्चित ही विचारवान हैं। यदि आपका यही निर्णय है तो आप शीघ्र ही 'विंध्यकोष्ठ' नामक स्थान पर जाइए। वहाँ अराड मुनि निवास करते हैं। आप उनसे तत्वज्ञान सुनिए और यदि आपको रुचिकर लगे तो स्वीकार कीजिए। परंतु आपको देखकर मुझे लग रहा है कि आप में जो अगाध गंभीरता है, जो तेज है तथा जो लक्षण हैं, उनके कारण आप स्वयं उस पद को प्राप्त करेंगे जो पहले किसी अन्य ऋषि-महर्षि ने प्राप्त नहीं किया है।"

यह सुनकर राजकुमार ने सबको नमस्कार किया। सभी आश्रमवासी तपस्वियों ने विधिवत उन्हें प्रणाम किया। फिर राजकुमार आश्रम से बाहर निकल आए और आश्रमवासी धीरे-धीरे लौट गए।

अंत:पुर विलाप

अपने स्वामी के तपोवन जाने के बाद अश्व-रक्षक छंदक धीरे-धीरे अपने घोड़े के साथ कपिलवस्तु की ओर जाने लगा। स्वामी के विरह में वह अत्यंत व्याकुल था,

© NCERT not to be republished

अश्रु थम नहीं रहे थे। जाते समय जिस मार्ग को उसने केवल एक रात में पूरा किया था, उसी मार्ग को अब पूरा करने में उसे आठ दिन लगे।

यद्यपि घोड़ा कंथक चल रहा था, पूर्ववत अलंकृत भी था, फिर भी शोक भाव के कारण वह अत्यंत मलिन और निस्तेज लग रहा था। जब से उसके स्वामी तपोवन गए हैं, तब से घोड़े ने न घास खाई है, न हीं पानी पिया है। इस तरह धीरे-धीरे दोनों ने कपिलवस्तु में प्रवेश किया।

कपिलवस्तु के वन, उपवन, जलाशय आदि सब कुछ कुमार के विरह में अरण्य के समान दिख रहे थे। राजकुमार के बिना दोनों के लौटने पर नगरवासियों ने वैसे ही आँसू बहाए जैसे प्राचीन काल में राम के बिना उनके रथ को देखकर अयोध्यावासियों ने आँसू बहाए थे। लोगों को उन पर खीज आ रही थी और वे कह रह थे— "पूरे नगर और राष्ट्र को आनंद देने वाले कुमार को तुम कहाँ छोड़ आए हो?"

बेचारा छंदक सबसे यही कहता कि मैंने कुमार को नहीं छोड़ा वरन वे ही मुझे निर्जन में रोता हुआ छोड़कर चले गए। छंदक की बातें सुनकर नागरिक कहते "तुमनें उन्हें किस वन में छोड़ा है? हम सब वहीं जाएँगे, क्योंकि उनके बिना यह नगर तो वन के समान हो गया है।"

नगर की जो स्त्रियाँ अपने घरों के झरोखों से झाँक रहीं थीं, वे राजकुमार के बिना घोड़े को देखकर रोने लगीं। अश्रुपूर्ण नेत्रों के साथ कंथक ने जब राजमहल में प्रवेश किया तो आर्त स्वर में हिनहिनाकर उसने अपना दुख प्रकट किया। उसकी हिनहिनाहट सुनकर राजमहल के सभी पक्षी और घोड़े आर्तनाद करने लगे। इस कोलाहल को सुनकर लोगों को लगा, जैसे राजकुमार लौट आए हैं। वे जिस स्थिति में थे, उसी स्थिति में बाहर आ गए। परंतु जब उन्हें ज्ञात हुआ कि राजकुमार नहीं आए हैं, तो सभी दुखी हो गए और रोने लगे। रानी गौतमी बिलख-बिलख कर रोने लगीं।

अंत:पुर की अनेक स्त्रियाँ शोक के कारण चेनताशून्य हो गईं। यह सब कुछ देख और सुनकर यशोधरा शोक और क्रोध से भरकर छंदक से बोली— "रे छंदक! रात को मुझे विवश सोती छोड़कर तुम मेरे मनोरथ को कहाँ छोड़ आए हो? अरे निर्दयी! अब तुम क्यों रो रहे हो? तुम हमारे हितैषी हो और तुम्हीं ने इस कुल का नाश कर दिया। अरे! यह कंथक अब क्यों हिनहिना रहा है? रात के अँधेरे में जब यह कुमार को लेकर गया था, तब क्या यह गूँगा हो रहा था?"

यशोधरा के वचन सुनकर छंदक और भी रोने लगा। फिर जैसे-तैसे अपने आपको सँभाल कर बोला— "हे देवी! आप कंथक की निदां न करें और न ही मुझे दोष दें। क्योंकि हम उस रात विवश थे। राजा के आदेश को जानते हुए भी मैं किसी दैवी प्रेरणा से घोड़ा ले आया और बिना थके रातभर उनके पीछे चलता रहा। घोड़े के चलने पर भी उसके खुरों से किसी तरह की ध्वनि नहीं हुई। राजभवन और नगर के सभी द्वार अपने आप खुल गए और सभी प्रहरी सो गए। इस सबको कोई दैवी विधान ही मानना चाहिए, तभी तो राजकुमार ने अपना मुकुट उतार फेंका और

© NCERT not to be republished

काषाय वस्त्र धारण कर लिए। हे देवी! इस सबके पीछे न मेरी इच्छा थी, न घोड़े की। लगता है, यह सब कुछ दैवी प्रेरणा से ही हुआ है।"

छंदक के मुख से कुमार के जाने की यह अद्भुत कथा सुनकर अंत:पुर की सभी स्त्रियाँ विषाद से भर गईं और फूट-फूटकर रोने लगीं। मौसी गौतमी बिलख-बिलख कर रो रही थीं और बार-बार मूर्च्छित हो जाती थीं। यशोधरा रो-रोकर कहती थी कि मैं ही अभागिन हूँ तभी तो वे मुझे छोड़कर गये हैं। मेरी न स्वर्ग–प्राप्ति की इच्छा है, न कोई और। मैं तो बस यही चाहती हूँ कि वे मुझे इस लोक में या परलोक में किसी प्रकार भूलें नहीं। हाय! उस मनस्वी का रूप ही सुकुमार था, उसका हृदय तो अत्यंत कठोर और निर्दय था। तभी तो वे अपने बाल पुत्र को छोड़कर चले गए हैं। मेरा हृदय अवश्य ही पत्थर या लोहे का बना है तभी तो फट नहीं रहा। इस तरह विलाप करते-करते यशोधरा मूर्च्छित हो गईं और अंत:पुर की अन्य स्त्रियाँ भी बिलख-बिलख कर रोने लगीं।

पुत्र को प्राप्त करने के लिए राजा शुद्धोदन देव-मंदिर में हवन आदि अनुष्ठान कर रहे थे, परन्तु जब उन्होंने सुना कि छंदक और कंथक लौट आए हैं और कुमार ने संन्यास ग्रहण कर लिया है तो वे व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

राजा शुद्धोदन रो-रोकर कहने लगे— "मुझे, आज, दशरथ से ईर्ष्या हो रही है, जो अपने पुत्र राम के वन जाने पर तत्काल स्वर्ग चले गए। हे भद्र! मुझे वह आश्रम बताओं जहाँ मुझे जलांजलि देने वाले मेरे पुत्र को तुम छोड़ आए हो।" इस तरह राजा पुत्र के वियोग के कारण अपना धैर्य खो बैठे। जैसे राम के वियोग में दशरथ रोते-रोते चेतना-शून्य हो गये थे वैसे ही वे चेतना शून्य होकर धरती पर गिर पड़े।

राजा को इस प्रकार व्याकुल देखकर राजा के शास्त्रज्ञ पुरोहित और गुणवान मंत्रीगण उनका उपचार करने लगे। उन्होंने राजा को समझाया और कहा— "हे नर-वीर, आप शोक छोड़िए। धैर्य धारण कीजिए। आप असित मुनि की भविष्यवाणी याद कीजिए। उन्होंने कहा था कि इस कुमार को न स्वर्ग रोक सकता है, न चक्रवर्ती राज्य। फिर भी हमें प्रयत्न करना चाहिए। आप आज्ञा दीजिए। आप कहें तो हम वहाँ जाएँ, जहाँ कुमार गए हैं, उन्हें समझाएँ और बुला लाएँ।"

राजपुरोहित और मंत्रियों की बातें सुनकर राजा ने तुरंत उन्हें जाने की आज्ञा दी और कहा— "शावक के लिए उत्सुक पक्षी की तरह अपने पुत्र के लिए मेरा हृदय छटपटा रहा है। आप लोग शीघ्र जाइए और मेरे पुत्र को ले आइए।" राजा की आज्ञा प्राप्त कर राजपुरोहित और मंत्रीगण राजकुमार की खोज में शीघ्र ही नगर से निकल पड़े।

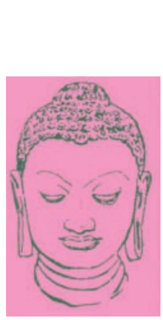

not to be republished © NCERT

कुमार की खोज

राजा शुद्धोदन की आज्ञा पाकर राजपुरोहित और राजमंत्री दोनों शीघ्र उस वन की ओर चलने लगे, जहाँ छंदक और कंथक राजकुमार सिद्धार्थ को छोड़ आए थे। कुछ समय बाद वे भार्गव आश्रम के पास पहुँचे। उन्होंने अपना राजसी वेश त्याग दिया और सामान्य नागरिक के रूप में आश्रम में प्रवेश किया अंदर जाकर उन्होंने आचार्य की अभ्यर्थना की और अपने आने का प्रयोजन बताया।

राजपुरोहित और राजमंत्री की बातें सुनकर आचार्य भार्गव ने कहा— "राजकुमार यहाँ आए थे। वे युवक अवश्य हैं, परंतु अबोध नहीं हैं। वे यहाँ कुछ समय रहे थे, परंतु बाद में मोक्ष की खोज में अराड मुनि के आश्रम चले गए हैं।" आचार्य की बातें सुनकर राजपुरोहित और मंत्री ने उनसे आज्ञा ली और वे पुन: राजकुमार की खोज में आगे निकल गए।

रास्ते में उन्होंने एक वृक्ष के नीचे कुमार को बैठे देखा। लगता था कि कुमार ने कई दिनों से स्नान नहीं किया है। फिर भी उनका शरीर वैसे ही चमक रहा था जैसे कि बादलों के बीच सूर्य चमक रहा हो।

कुमार को देखते ही वे दोनों रथ से उतरे और जैसे वनवासी राम को मनाने वामदेव और वसिष्ठ चित्रकूट गए थे, वैसे ही दोनों कुमार को मनाने वहाँ गए। पुरोहित और मंत्री ने कुमार की और कुमार ने पुरोहित और मंत्री की अभ्यर्थना की।

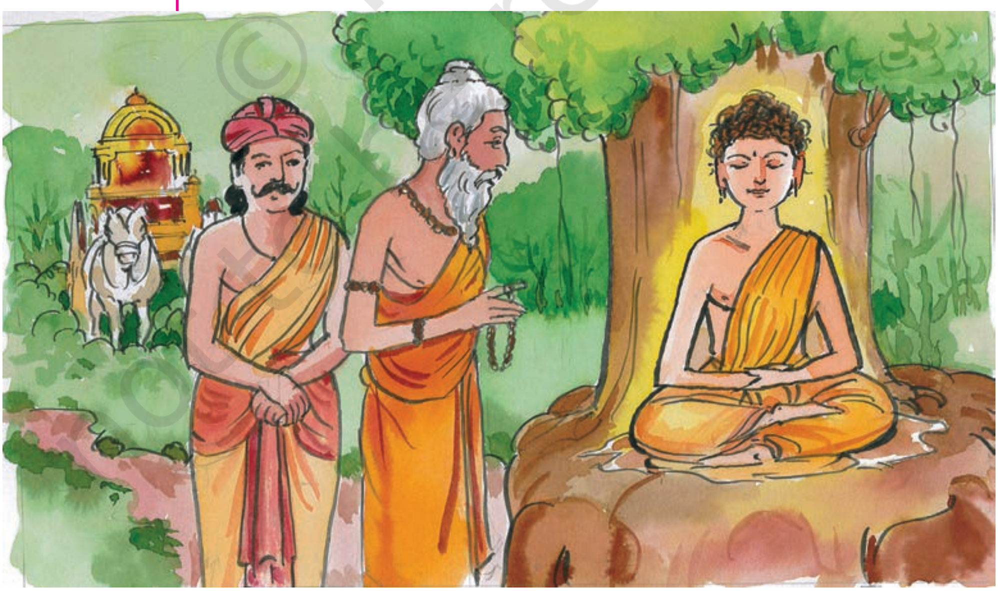

दोनों कुमार की आज्ञा प्राप्त करके उनके पास बैठ गए। वृक्ष के नीचे बैठे कुमार को पुरोहित ने समझाया— "हे कुमार! आपके वियोग से दुखी राजा ने जो कहा है, उसे पहले आप सुनिए— धर्म के प्रति आपकी आस्था और आपके भविष्य को मैं जानता हूँ। परंतु आपने असमय ही वन का आश्रय लिया है। उसके कारण मैं शोक की आग में जल रहा हूँ। इसलिए मेरे प्राणों की रक्षा के लिए आपको घर लौट आना चाहिए। जैसे वायु मेघ को उड़ा देता है, सूर्य जल को सुखा देता है और अग्नि घास को जला देती है, वैसी ही शोक मुझे जला रहा है। अत: आप घर लौट चलिए और राजसुख भोगिए। समय आने पर वन जा सकते हैं। अभी तो लौट चलिए। मुझ मरणासन्न की उपेक्षा आपको नहीं करनी चाहिए, क्योंकि जीवों पर दया ही सभी धर्मों का मूल है।"

पुरोहित ने आगे कहा— "देखिए, धर्म के लिए वन जाना अनिवार्य नहीं है। सभी प्रकार के सुख भोगते हुए भी अनेक गृहस्थ राजाओं ने मोक्ष प्राप्त किया है। ध्रुव के अनुज बलि और वज्रबाहु, विदेहराज जनक और राम ऐसे ही राजा थे। इसलिए आप भी इन्हीं की तरह ज्ञान और राजलक्ष्मी दोनों का सुख एक साथ भोगिए। मेरी तो यही इच्छा है कि मैं आपको राज्याभिषेक करूँ और स्वयं सहर्ष वन को चला जाऊँ।" हे कुमार! राजा के अश्रुसिक्त वचनों को सुनकर आपको राजा के स्नेह को मान देना चाहिए। जैसे– भृगपुत्र परशुराम ने, दशरथ-पुत्र राम ने तथा गंगापुत्र भीष्म पितामह ने अपने पिता की आज्ञा मानी थी, वैसे ही आपको भी अपने पिता की आज्ञा माननी चाहिए।

आपका पोषण करने वाली माता अभी जीवित हैं, पर वे उसी तरह निरंतर क्रंदन करती रहती हैं, जैसे अपने बछड़े के न रहने पर गाय रोती रहती है। हंस से वियुक्त हंसिनी की तरह व्याकुल अपनी पत्नी को आप सनाथ कीजिए। अपने अबोध पुत्र को अपना प्यार दीजिए। नगर तथा अंत:पुर के सभी लोग शोकाकुल हैं, अपने दर्शन से उनका शोक दूर कीजिए।

राजपुरोहित के इन वचनों को सुनकर कुमार सिद्धार्थ ने सविनय उत्तर दिया—"है तात! मैं पुत्र के प्रति पिता के प्रेम को जानता हूँ और यह भी जानता हूँ कि राजा का मेरे प्रति विशेष प्रेम है। यह जानते हुए भी जरा, व्याधि और मृत्यु से डरकर ही मैंने लाचारी में स्वजनों को छोड़ा है। संयोग के बाद वियोग अवश्यंभावी है। इसीलिए मैं स्नेही पिता को अभी छोड़ रहा हूँ। अन्यथा अपने प्रिय स्वजनों को कौन नहीं देखना चाहेगा? मेरे कारण राजा को शोक हुआ, यह मुझे अच्छा नहीं

लगा, परन्तु मिलन स्वप्न के समान होता है और वियोग के दिन शाश्वत हैं। इसमें संताप का कोई कारण नहीं है। संताप तो अज्ञान के कारण ही होता है।"

कुमार ने आगे कहा— "मनुष्य पूर्वजन्म के स्वजनों को छोड़कर यहाँ आता है और फिर यहाँ स्वजनों को छोड़कर चला जाता है। जब गर्भ से लेकर सभी अवस्थाओं तक मृत्यु सामने खड़ी है, तो मोक्ष के लिए किसी काल विशेष की क्या प्रतीक्षा? राजा मेरे लिए राज्य छोड़ना चाहते हैं, यह उनकी उदारता है। किंतु मेरे लिए यह अपथ्य के समान अग्राह्य है। धर्म की खोज में मैं वन में आया हूँ। मेरे लिए अब अपनी प्रतिज्ञा को तोड़कर घर लौटना उचित नहीं होगा। मैं अब घर और बंधुओं के बंधन में नहीं पड़ना चाहता।"

राजकुमार की बातों को सुनकर राजमंत्री ने भी उन्हें समझाया। उन्होंने कहा— "हे कुमार! धर्म में आपकी निष्ठा अनुचित नहीं है, परंतु वृद्ध पिता को दुख: देकर धर्म का पालन भी उपयुक्त नहीं है। आप प्रत्यक्ष सुख को छोड़कर अदृष्ट लक्ष्य के लिए वन में चले आए हैं, उसमें कोई बुद्धिमानी नहीं है। कुछ लोग पुनर्जन्म को ही नहीं मानते। ऐसी स्थिति में प्रत्यक्ष प्राप्त लक्ष्मी का उपभोग करना ही उचित है।शास्त्रों का विधान है कि संतान उत्पत्ति द्वारा पितृऋण, वेदों के अध्ययन द्वारा ऋषि ऋण और यज्ञों के द्वारा देव-ऋण से मुक्त होना ही मोक्ष है। इसलिए हे सौम्य! यदि आप की रुचि मोक्ष में है तो शास्त्रानुसार आचरण कीजिए। इससे आपको मोक्ष भी मिलेगा और पिता का शोक भी नष्ट हो जाएगा। आपको तपोवन से घर लौटने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए, क्योंकि पहले भी अपनी प्रजा के अनुरोध पर राजा अंबरीष वन से घर लौट आए थे। इसी प्रकार राम और शाल्व देश के राजा द्रुम भी वन से घर लौट आए थे। अत: धर्म के लिए वन से घर लौटने में किसी प्रकार का दोष नहीं है।"

राजमंत्री के तर्कों को सुनकर राजकुमार ने कहा— "मैं इस विषय में दूसरों की बातों पर विश्वास नहीं करता। तपस्या और शांति से जो तत्वज्ञान मुझे होगा, मैं उसे ही स्वीकार करूँगा। राम जैसे पहले के राजाओं के जो उदाहरण आपने दिए हैं, वे मेरे लिए प्रमाण नहीं हैं। इसीलिए यदि सूर्य पृथ्वी पर गिर पड़े, हिमालय चलायमान हो जाए, तो भी मैं बिना तत्वज्ञान प्राप्त किए घर नहीं लौट सकता। मैं जलती हुई आग में प्रवेश कर सकता हूँ, पर असफल होकर घर में प्रवेश नहीं कर सकता।"

इस प्रकार अपनी बातें स्पष्ट रूप से कहकर राजकुमार वहाँ से उठकर आगे चले गए। राजपुरोहित और राजमंत्री, राजकुमार के दृढ़ निश्चय को सुनकर बहुत

© NCERT not to be republished

दुखी हुए। कुछ समय तक वे कुमार के पीछे-पीछे चले, फिर निराश होकर नगर की ओर लौटने लगे। उन्होंने राजकुमार की गतिविधि के बारे में सूचना देने के लिए कुछ गुप्तचरों को नियुक्त किया। राजा से अब क्या कहेंगे, कैसे उन्हें समझाएँगे, यही सोचते-सोचते वे कपिलवस्तु की ओर चलने लगे।

बिंबसार से भेंट

राजपुरोहित और राजमंत्री को छोड़कर राजकुमार आगे चलते गए। कुछ समय बाद उन्होंने उत्ताल तरंगों वाली गंगा को पार किया और धन-धान्य से संपन्न राजगृह नामक नगर में प्रवेश किया। चारों ओर से पर्वतों से सुरक्षित और पवित्र तप्त कुंडों से युक्त इस नगर में उन्होंने वैसे ही प्रवेश किया जैसे कि स्वर्ग में स्वयंभू (ब्रह्मा) ने प्रवेश किया था। शिव के समान दृढ़व्रती राजकुमार के गांभीर्य तथा तेज के कारण नगर के लोग उन्हें विस्मय से निहारते रहे। उनका ऐसा प्रभाव था कि जो लोग जा रहे थे, वे रुक गए, जो रुके हुए थे, वे उनके पीछे-पीछे चलने लगे, जो जल्दी-जल्दी जा रहे थे, वे धीरे-धीरे चलने लगे और जो बैठे थे, वे खड़े हो गए। किसी ने आगे बढ़कर अपने हाथों से उनकी पूजा की, किसी ने सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और और किसी ने मधुर शब्दों में उनका अभिनंदन किया। उनको देखकर जो लोग सुसज्जित थे, विचित्र वेशभूषा धारण किए हुए थे, वे लज्जित हो गए और जो वाचाल थे, वे मौन हो गए। उनकी भृकुटी, ललाट, मुख, नेत्र, शरीर, हाथ, पैर, चलने की गति, जो भी जिसने देखी, वह वही देखता रह गया। उस प्रत्यक्ष धर्म की मूर्ति के सामने सभी ठगे से रह गए।

मगध के राजा बिंबसार ने जब अपने महल से उन्हें और उनके पीछे-पीछे चलने वाली भीड़ को देखा तो उन्होंने इसका कारण पूछा। राजकर्मचारियों ने राजा को बताया कि वह शाक्य राजपुत्र परिव्राजक सिद्धार्थ हैं। इनके विषय में ब्राह्मणों ने यह भविष्यवाणी की थी कि यह या तो परम ज्ञान को प्राप्त करेंगे या चक्रवर्ती सम्राट होंगे।

यह सुनकर राजा ने अपने अनुचरों को आज्ञा दी— "जाओ और पता लगाओ, वह कहाँ जा रहा है?" राजा की आज्ञा के अनुसार राजकर्मचारी राजमहल से बाहर आए और परिव्राजक वेशधारी सिद्धार्थ के पीछे-पीछे चलने लगे उन्होंने देखा कि परिव्राजक की दृष्टि स्थिर है; वाणी मौन है; गति नियंत्रित है; वे भिक्षा माँग रहे हैं; भिक्षा में जो कुछ मिलता है, वह उसे ही स्वीकार करते हुए आगे बढ़ रहे हैं।

भिक्षा में मिले अन्न को लेकर वे एक पर्वत पर गए। एकांत निर्झर के पास बैठकर उन्होंने भोजन किया और फिर वे पांडव पर्वत पर जाकर बैठ गए। काषाय वेशधारी सिद्धार्थ पर्वत पर वैसे ही सुशोभित हो रहे थे, जैसे कि उदयाचल पर बालसूर्य प्रकट हो गया हो।

राजकर्मचारियों ने यह सब देखकर राजा बिंबसार को सूचित किया। बिंबसार ने अपने साथ कुछ अनुचरों को लिया और वे स्वयं बोधिसत्व (सिद्धार्थ) से मिलने के लिए चल पड़े।

वहाँ पहुँचने पर राजा बिंबसार ने देखा कि बोधिसत्व पर्यंक आसन में शांत भाव से बैठे ऐसे लग रहे हैं, जैसे कि बादलों की ओट से चंद्रमा चमक रहा हो। राजा धीरे-धीरे उनके निकट गए और कुशल-क्षेम पूछी। कुमार ने भी यथोचित उत्तर दिया। फिर राजा आज्ञा प्राप्त कर एक शिलाखंड पर बैठ गए और उनसे वार्तालाप करने लगे। राजा बिंबसार ने उनसे कहा— "हे कुमार! आपके कुल से हमारा पुराना प्रेम-संबंध है। हे मित्र, मेरी बात सुनिए। आपका सूर्य वंश महान है और आपकी अवस्था अभी नई है। फिर क्यों आपकी बुद्धि स्वाभाविक क्रम तोड़कर, राज्य में न रमकर भिक्षा वृत्ति में रमी है? आपका शरीर तो अभी लाल-चंदन के लेप के योग्य है, काषाय वस्त्र धारण करने लायक नहीं है। अभी आपके हाथ प्रजापालन के योग्य हैं, भिक्षा माँगने योग्य नहीं हैं। हे सौम्य! यदि आप स्नेहवश अपने पिता का राज्य पराक्रम से प्राप्त करना नहीं चाहते, पिता के बाद राज्य प्राप्ति तक प्रतीक्षा नहीं कर सकते, तो आप मेरा आधा राज्य ले लीजिए और भोगिए। आप मेरे साथ मैत्री कीजिए। यदि आपको अपने कुल के अभिमान के कारण मुझ पर विश्वास नहीं है, तो मेरी प्रबल सेना की सहायता से शत्रुओं को जीतिए। आप इन दोनों विकल्पों में से किसी एक पर अपनी बुद्धि स्थिर कीजिए और धर्म, अर्थ और काम का सेवन कीजिए। यदि संपूर्ण पुरुषार्थ की प्राप्ति की इच्छा है तो त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) का सेवन कर अपना जन्म सफल कीजिए। आप धनुष चढ़ाने लायक अपनी भुजाओं को इस प्रकार व्यर्थ न कीजिए। ये मांधाता के समान तीनों लोकों को जीतने में सक्षम हैं, फिर पृथ्वी की तो बात ही क्या! निश्चय ही यह सब कुछ मैं स्नेहवश ही आपसे कह रहा हूँ! न ऐश्वर्य के राग से और न अभिमान से। आपको भिक्षु वेश में देखकर मुझे दया आती है और रोना भी आता है। जब तक बुढ़ापा आपके रूप को नहीं मिटा देता तब तक विषयों को भोगिए। हे धर्मप्रिय! समयानुसार ही धर्माचरण करना चाहिए।"

इस प्रकार मगध के अधिपति ने विविध प्रकार से कुमार को समझाया परंतु वह कैलाश पर्वत के समान अटल रहा और ज़रा भी विचलित नहीं हुआ।

काम निंदा

मगधराज के मुख से अपने लक्ष्य के लिए प्रतिकूल बातें सुनकर भी सिद्धार्थ ने शांतिपूर्वक निर्विकार भाव से उत्तर देते हुए कहा— "हे हर्यंकवंशी राजा! आपने अपने मित्र के पक्ष में जो कुछ भी कहा है, वह आश्चर्यजनक नहीं है। पूर्वजों की मैत्री को सज्जन अपनी प्रीति परंपरा से और भी बढ़ाते हैं। सचमुच जो धनहीन मित्र की भी सहायता करता है, वही सच्चा मित्र कहलाता है। इसलिए हे राजन! मित्रता और सज्जनता के कारण मैं आपको उत्तर तो नहीं दे सकता, परंतु अनुनय अवश्य करना चाहता हूँ। मैं तो जरा और मृत्यु के भय से ही मोक्ष की इच्छा से धर्म की शरण में आया हूँ। इसलिए मैंने काम को त्यागा है और उसी के साथ अपने बंधुओं को भी छोड़ा है। मैं साँपों से, वज्रपात से या प्रचंड अग्नि से भी उतना नहीं डरता, जितना मैं विषयों से डरता हूँ। काम अनित्य है; वह ज्ञान रूपी धन का चोर है; वह मोह-पाश में बाँधता है; जैसे पवन-प्रेरित अग्नि ईंधन से तृप्त नहीं होती; वैसे ही विषय-तृषित व्यक्ति कभी विषय-भोगों से तृप्त नहीं होता; जैसे अनंत नदियों के गिरने से भी समुद्र की तृप्ति नहीं होती वैसे ही काम के भोग से मनुष्य को कभी तृप्ति नहीं मिलती।

देखिए, देवों द्वारा स्वर्ण की वर्षा किए जाने पर, सभी द्वीपों को जीतने के बाद और इंद्र का आधा आसन प्राप्त करने के बाद भी मांधाता को तृप्ति नहीं मिली। विषयों का चिंतन भी अमंगल है। इसीलिए सज्जन काम का त्याग करते हैं। यह जानकर भी इस काम के विष को कौन ग्रहण करेगा?

आप जानते हैं कि संगीत की आसक्ति से हिरन मरते हैं; रूप की आसक्ति से पतंगे जल पाते हैं; मांस के लोभ से मछलियाँ प्राण देती हैं; आसक्ति का परिणाम ही विपत्ति है। इसलिए मैं मानता हूँ कि इससे दूर रहना ही बुद्धिमानी है।

मैं जानता हूँ, न राजा सदा हँसता रहता है और न दास सदा संतप्त रहता है। मेरे लिए राजा और दास दोनों ही बराबर हैं। संपूर्ण पृथ्वी को जीतकर भी सम्राट अपने निवास के लिए एक ही पुर चुनता है। राजा भी एक जोड़ा वस्त्र पहनता है और एक ही शय्या पर सोता है, शेष सब कुछ तो मात्र दिखावा है, मद है।

© NCERT not to be republished

संतोष हो जाने पर मनुष्य को यह सारा संसार निरर्थक लगने लगता है। इसीलिए मैं जान-बूझकर कल्याण के मार्ग पर प्रवृत्त हुआ हूँ। आप मित्र होने के नाते कामना कीजिए कि मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करूँ। मैं न तो क्रोध से वन में आया हूँ न पराजित होकर या किसी फल विशेष-की इच्छा से आया हूँ। इसीलिए मैं आपकी बात नहीं मान पा रहा हूँ। मैं तो संसार रूपी वाण से धायता होकर शांति पाने की इच्छा से निकला हूँ। मुझे तो स्वर्ग का भी राज्य नहीं चाहिए, इस पृथ्वी के राज्य की तो बात ही क्या!

हे राजन! आपने कहा था कि त्रिवर्ग का संपूर्ण रूप से सेवन करना ही परम धर्म है। आपकी यह बात मुझे अनर्थकारी लगती है, क्योंकि त्रिवर्ग नाशवान है और संतोषप्रद भी नहीं हैं। मैं तो परम पद उसे मानता हूँ जिसमें न जरा है; न भय है; न रोग है; न जन्म है; न मृत्यु है; न व्याधि हैं और जिसके पाने के बाद कुछ भी करणीय नहीं रहता है। यमराज सभी को किसी भी अवस्था में बलात खींच लेता है, इसीलिए कल्याण के लिए वृद्धावस्था की प्रतीक्षा करना उचित नहीं है।

हे राजन! अब मुझे ठगा नहीं जा सकता है। मैं वह सुख भी नहीं चाहता, जो दूसरों को दु:ख देकर प्राप्त किया जाता है। मैं यहाँ आया था और अब मोक्षवादी अराड मुनि से मिलने जा रहा हूँ। आपका कल्याण हो। आप मुझे कठोर सत्य कहने के लिए क्षमा करें।

हे राजन! आप इंद्र के समान रक्षा करें; सूर्य के समान रक्षा करें; आप अपने गुणों से कल्याण की रक्षा करें; पृथ्वी की रक्षा करें; आयु की रक्षा करें, सत्पुत्रों की रक्षा करें; धर्म की रक्षा करें और अपनी रक्षा करें।

कुमार भिक्षु के ये आशीर्वचन सुनकर मगधराज ने बड़े अनुनय के साथ हाथ जोड़े और कहा— "आप अपना अभीष्ट प्राप्त करें, कृतार्थ हों और समय आने पर मेरे ऊपर भी अनुग्रह करें।" "अच्छा, ऐसा ही हो," कह कर सिद्धार्थ वहाँ से वैश्वंतर आश्रम की ओर चल दिए। मगधराज भी सिद्धार्थ के परिव्राजक रूप से विस्मित होकर अनुचरों के साथ राजगृह की ओर लौट गए।

प्रश्न

1. सिद्धार्थ को निर्वाण के विषय में पहली प्रेरणा किस प्रकार मिली?
2. राजकुमार ने तपोवन न जाने के लिए राजा के समक्ष क्या-क्या शर्तें रखीं?

© NCERT not to be republished

3. छंदक कौन था? सिद्धार्थ ने उसे नींद से क्यों जगाया?
4. सिद्धार्थ से अलग होने पर छंदक और कंथक की दशा का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
5. तपोवन में सिद्धार्थ ने तपस्वियों को क्या करने के लिए कहा?
6. वन से लौटने के संबंध में राजमंत्री के तर्क सुनकर सिद्धार्थ ने क्या कहा?
7. बिंबसार ने सिद्धार्थ की सहायता के लिए क्या प्रस्ताव रखा?

© NCERT not to be republished